साहित्य एवं समाज में दलित संवेदना के विविध सरोकार

डॉ0 शिवकुमार शर्मा,
अध्यक्ष–हिन्दी विभाग,
माधव स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर(म.प्र.)

कौशल सिंह यादव,
शोध छात्र–हिन्दी,
जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर(म.प्र.)

सामाजिक परिवर्तन के परिप्रेक्ष्य में इक्कीसवी सदी का आकलन तमाम तरह के यक्ष प्रश्न उत्पन्न कर रहा है। भारतीय समाज की मानसिक द्वन्द्वता अपने पूरे आयाम को समेटे हुए प्राचीन और आधुनिकता के मध्य घड़ी के लोलक की भाँति दोलायमान है। वर्तमान सदी में जहाँ हम भारत को एक विकसित राष्ट्र बनाने की कल्पना कर रहे हैं, वहीं हम स्वयं अपने आचरण एवं व्यवहार से अठारहवीं सदी की मानसिकता में जीने के लिए प्रतिबद्ध दिखाई पड़ते हैं। समाज में वर्तमान सदी तक जहाँ समता, समानता और बन्धुता का प्रकाश फैलना चाहिए था, वहाँ हम आज भी उपेक्षा, दलन और शोषण की परंपरा को प्रवाहित होने में मदद कर रहे हैं। शोषण और दालित्य को बनाये रखने के लिए पूँजीवाद और परम्परागत मानसिकता ही निरंतर जिम्मेवार रहे हैं और आज भी स्वयं को श्रेष्ठ मानने वाली अर्थात् ब्राह्मणीय व्यवस्था के साथ ही साथ पूँजीवाद भी विशालकाय राक्षस की भाँति दबे–कुचलों का शोषण जारी रखे हुए है।

यद्यपि साहित्य में 'दलित' शब्द बाद में आया, पर दलितों के प्रति संवेदना आदिकाल से ही दिखायी देती है। नाथों तथा सिद्धों ने समाज के निम्न वर्ग की वकालत की है। भक्तिकाल में समाज के निम्नवर्ग की वकालत करने वालों में कबीरदास का नाम अत्यन्त आदर तथा श्रद्धा के साथ लिया जा सकता है। निर्गुण सम्प्रदाय के अन्य सन्त नानक, दादू, रज्जब, रैदास, धर्मदास, मलूक आदि ने भी कबीर के ही मार्ग पर चलने का प्रयास किया है तथा समाज के निम्न वर्ग को उसका अधिकार दिलाने की भरपूर कोशिश की इसमें कबीर सबसे अग्रणी हैं। परम्परावादियों के अहंकार पर प्रहार करते हुए कबीर ने लिखा है –

''पण्डित देखहुँ मन मँह जानी।
कह धौं छूति, कहाँ ते उपजी, तबहिं छूति तुम मानी।
बादे बन्दे रूधिर के संगे घर पर ही मँह घट सपचै।
अस्ट–कमल होय पुहुमी आया, छूति कहाँ ते उपजै।
लख चौरासी नाना बासन सभ सरि भी माटी।
एकै पाट सकल बैठाए, छूति लेत धौ काकी।''[1]

डॉ0 आम्बेडकर ने नवम्बर सन् 1949 ई0 में संविधान सभा की बैठक के दौरान कहा था कि '' हमें यह कहने में जरा भी संकोच नहीं कि इस देश में राजनैतिक ताकत पर लम्बे समय से कुछ खास लोगों का एकाधिकार रहा है। इस एकाधिकार ने अधिसंख्य लोगों को न केवल बेहतर जीवन व्यतीत करने के अवसर से वंचित किया है, बल्कि उन्हें उससे भी दूर रखा है जिसे जीवन की सार्थकता कहा जा सकता है।'' इसमें कोई शक नहीं कि दलितों के हित को लेकर लगभग हर राजनैतिक दल व उसका शीर्ष नेतृत्व मौखिक सहानुभूति जताता रहा है। अतीत के इतिहास को खँगालें तो डॉ0 आम्बेडकर के उभार से पूर्व दलितों की उन्नति के रूप में सदैव पश्चिमी राज्यों मसलन महाराष्ट्र को देखा जाता रहा है।'

'मैं अछूत हूँ, यह पाप है लोग अछूतों को भी पशुओं से भी गया बीता समझते हैं वह कुत्ते बिल्ली को तो छू सकते हैं, परन्तु महार (अस्पृश्य)

जाति के आदमी को नहीं।'' किसने बनायी यह छुआछूत की व्यवस्था? किसने बनाया किसी को ऊँच किसी को नीच? भगवान ने? हर्गिज नहीं। वह ऐसा नहीं करते। वह सभी को समान रूप से जन्म देते हैं। यह बुराई तो मनुष्य ने पैदा की है। मैं इसे समाप्त करके ही रहूँगा।[2] डॉ0 भीमराव आम्बेडकर दलितों, शोषितों की मुखर आवाज को बुलन्द किया। भारत में जाति व्यवस्था से सबसे अधिक पीड़ित अगर कोई रहा है तो वह शूद्र वर्ण है और डॉ0 अम्बेडकर उस शोषित जाति के मसीहा थे। भारत सदियों से जाति नामक व्यवस्था के दुष्परिणामों से ग्रसित रहा है। हजारों वर्षों से इस वर्ग का शोषण व अनादर होता रहा है। बहुत से सन्तों, समाज सुधारकों ने इस बुराई को दूर करने का प्रयास किया। किन्तु इसे वह जड़ से उखाड़ना तो दूर उसे हिला तक न सके। जाति नामक बुराई पर सर्वाधिक प्रहार उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में प्रारम्भ होते हैं इसी समय आजादी के पुरोधा महात्मा गाँधी व डॉ0 अम्बेडकर का भारतीय परिदृश्य में आगमन हुआ।

डॉ0 अम्बेडकर अस्पृश्यता के विरोधी थे, उनकी दृष्टि में अस्पृश्यता दास प्रथा से भी बुरी है, ''अस्पृश्यता और दास प्रथा में अन्तर है, जिससे अस्पृश्यता एक परतंत्र सामाजिक व्यवस्था की सबसे खराब मिसाल बन जाती है। कोई व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति को अपने दास के रूप में रख सकता है, उस पर कोई ऐसी बाध्यता नहीं है कि वह नहीं चाहने पर भी रखे, किन्तु अछूत के पास कोई विकल्प नहीं है। एक अछूत के रूप में पैदा होने पर अछूत की सारी योग्यताएँ उसे मिल जाती हैं। दास प्रथा का कानून छुटकारे की इजाजत देता है। एक बार का गुलाम, हमेशा गुलाम, यह गुलाम की नियति नहीं थी। अस्पृश्यता से बच निकलने का कोई रास्ता नहीं। एक बार अछूत, हमेशा अछूत।''[3] अस्पृश्यता को डॉ0 अम्बेडकर उस प्रथा से भी बुरी मानते हैं पर वह यह भूल जाते है कि अस्पृश्य लोगों को ही दास बनाया जाता था, अतः अस्पृश्य और दास प्रथा एक ही हैं, दोनों के साथ भेद–भाव चलता रहा है, दोनों ही समाज की क्रूर दृष्टि के शिकार रहे हैं।

महात्मा गाँधी जी अस्पृश्यता को मिटाना चाहते थे। किन्तु किसी भी कीमत पर नहीं। वह अहिंसा द्वारा ही निम्न जातियों को उनका अधिकार दिलाना चाहते थे। ''अस्पृश्यता को गाँधी जी एक कलंक के रूप में मानते थे तथा उससे उसकी मुक्ति आवश्यक मानते थे। अस्पृश्यता एक मानव समानता विरोधी अवधारणा है। इसीलिए उसका किसी भी आधार पर औचित्य सिद्ध नहीं किया जा सकता। अतः गाँधी जी अस्पृश्यता निवारण को एक मुख्य मिशन बना लिया था। अस्पृश्यों को उन्होंने आदर सूचक 'हरिजन' नाम दिया तथा स्वयं को भी हरिजन घोषित किया।[4]

डॉ0 अम्बेडकर और अम्बेडकरवादियों में आज वही अन्तर है जो महात्मा गाँधी और गाँधी के अनुयायियों के बीच। डॉ0 अम्बेडकर देश को समता और बन्धुता का पाठ पढ़ाकर सामाजिक परिवर्तन की आंकाक्षा अपने सम्पूर्ण जीवन में पाले रहे किन्तु दुर्भाग्य से वर्तमान राजनैतिक और सामाजिक वर्ग जो स्वयं को अम्बेडकरवादी विचार धारा का पोषक बताकर प्रसारित कर रहा है वह डॉ0 अम्बेडकर की दूरदर्शिता को नहीं छू पाया। दलित, शोषित और उत्पीड़ित केवल एक वर्ग या जाति विशेष में हो ऐसा नहीं। सामाजिक स्तर पर भले ही थोड़ा सा भी सम्मान प्राप्त करने वाला आर्थिक दृष्टि से कमजोर और गरीब भी दलित और शोषित की परिधि में आता है। डॉ0 अम्बेडकर की दूरन्देशी सोच का वर्तमान दलित दृष्टिकोण उपेक्षित कर रहा है। आज डॉ0 अम्बेडकर को एक वर्ग विशेष की बात कहने वाले के तौर पर पेश किया जा रहा है, जो न केवल डॉ0 अम्बेडकर का अपमान है बल्कि उनकी नैतिक और विस्तृत विचारधारा को संकीर्ण बनाने और मानने का प्रयास जारी है। ''अब वह सिर्फ हाशिए की जातियों के उद्धार में अपने अप्रतिम

योगदान के लिए याद किये जाते हैं। निस्संदेह डॉ0 भीमराव अम्बेडकर ने दलितों के भीतर आत्मगौरव का भाव भरा। लेकिन शायद हम यह भूल गए कि वह सिर्फ क्रांतिकारी दलित ही नहीं थे, बल्कि एक दूरदर्शी लोकतंत्र कामी भी थे, जिनकी जिन्दगी और विचार, जाति और धर्म से परे सभी भारतीयों को विवेकशील, ज्ञान सम्पन्न बना सकते हैं।''[5]

महात्मा गाँधी ने अपनी हरिजन पत्रिका में अस्पृश्यता के विषय में लिखा है कि ''अस्पृश्यों पर थोपी गयी अस्पृश्यता एक ऐसा जहर है जो अपने प्रभाव क्षेत्र में रहने वाले सभी लोगों पर चढ़ गया है। इसलिए हिन्दू, मुसलमान, ईसाई और अन्य धर्मावलम्बी सभी आपस में एक–दूसरे के लिए अस्पृश्य बन गये हैं। अस्पृश्यता के वास्तविक निवारण से निश्चय ही हम सभी एक–दूसरे के नजदीक आयेंगे और इस प्रकार भारत के विभिन्न समुदायों के बीच हार्दिक एकता पैदा होगी।''[6]

महात्मा गाँधी अस्पृश्यता को हिन्दू धर्म का विकृत रूप मानते थे, ''मैं हिन्दू धर्म को अस्पृश्यता के पाप से मुक्त करके उसे शुद्ध कर देना चाहता हूँ, जिस छुआछूत रूपी शैतान ने हिन्दू धर्म को विकृत किया और विरूप बना डाला है, उसे मैं निकाल कर बाहर करना चाहता हूँ। मैं जानता हूँ कि अगर यह बुराई जड़मूलल से उखाड़कर फेंक दी गयी, तो वही भाई जो आज धर्म को मुल्क की तरक्की में सबसे अधिक बाधक समझते हैं, फौरन अपनी राय बदल देंगे। हिन्दू धर्म में अस्पृश्यता के लिए स्थान है तो मैं उसी वक्त इस धर्म का त्याग कर दूँ।''[7]

वर्तमान दलित विमर्श और डॉ0 अंबेडकर का अनुयायी बताने वाला वर्ग भी न तो गाँधी को स्वीकार करना चाहता है और न ही डॉ0 अम्बेडकर की भावना को आत्मसात करने का प्रयास कर रहा है। सामाजिक समता और समानता के स्तर पर शोषितों और उत्पीड़ितों को सामाजिक न्याय दिलाने की दिशा में न तो कोई प्रयास किया जा रहा है और न ही किसी प्रकार की जागरूकता का प्रसार ही। ''इस वास्तविकता को शायद दलित पार्टियाँ स्वीकार न करें कि दलित राजनीति में आज भी सामान्य दलित का न तो कोई स्थान है न ही भूमिका। वो हाशिए पर हैं, क्योंकि दलित पार्टियों ने उसका उपयोग अपने 'वोट बैंक' के रूप में किया है, परन्तु उसमें सामाजिक, राजनीतिक या आर्थिक जागरूकता जगाने का प्रयास कभी नहीं किया गया। इसके पीछे शायद यह कारण भी रहा हो कि अगर कल को यही दलित सीना तानकर अपने अधिकार और सम्मान की बात दलित नेताओं से कहता है तब उनके पास इन्हें न करने का क्या विकल्प रह जाएगा? इसलिए जहाँ तक हो सके, दलितों को अपने अभावों–त्रासदियों में ही जीने दो। गौरतलब है, आज दलित जितना शोषित सवर्ण समाज से है उससे कहीं ज्यादा अपनों से भी है। ऐसा नहीं है कि ये तमाम दलित नेता एक रात में ही बादशाह बन बैठे हैं, इसके लिए उन्होंने संघर्ष अवश्य किया है, लेकिन एक स्तरीय पद या सम्मान प्राप्त कर वे अब सब कुछ, अपना संघर्ष, अपना आन्दोलन भुला चुके हैं, क्योंकि सत्तामद ने उन्हें खुद से भी दूर कर दिया है।''[8]

सहायक सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. बीजक–शब्द–41
2. भारतीय राजनीतिक चिन्तक– मेहता जीवन,एस0बी0पी0बी0 पब्लिशिंग हाउस, आगरा,2010,पृ0 204
3. गाँधी, नेहरू, टैगोर एवं अम्बेडकर : एच. एल. पाण्डेय,पृ. 115
4. भारतीय राजनीतिक चिन्तक–मेहता जीवन,एस0बी0पी0बी0 पब्लिशिंग हाउस, आगरा, 2010,पृ0 188

5. रामचन्द्र गुहा, 'अमर उजाला',सम्पादकीय पृष्ठ– 25.01.2010
6. हरिजन–महात्मा गाँधी–20–04–34
7. हरिजन–महात्मा गाँधी–26–1–34
8. राजकिशोर, प्रधान संम्पादकः दलित राजनीति की समस्याएँ,पृ0सं0–124